ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876

Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11 , Iss 12, 2022

भारतीय चिंतन और पर्यावरणीय सरोकार

शरद कुमार यादव
सहायक प्राध्यापक
राजनीति विज्ञान विभाग
शहीद भगत सिंह सांध्य महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति में प्रकृति का एक महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन काल से ही भारतीय समाज ने प्रकृति के साथ एकात्मता का अनुभव किया है और उसके संरक्षण को धर्म का एक अभिन्न अंग माना है। हमारे धार्मिक ग्रंथों, वेदों, उपनिषदों, और पुराणों में पर्यावरण के संरक्षण और उसकी महत्ता को स्पष्ट रूप से बताया गया है। भारतीय परंपराओं में पर्यावरण के प्रति सम्मान और संवेदनशीलता की भावना निहित है। आज जब पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन जैसी गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है, तब भारतीय संस्कृति में प्रकृति के प्रति सम्मान का भाव और अधिक प्रासंगिक हो गया है। आज पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन के गंभीर संकट का सामना कर रही है। वैश्विक तापमान में लगातार वृद्धि हो रही है, समुद्र का जलस्तर बढ़ रहा है, और चरम मौसमी घटनाएं जैसे बाढ़, सूखा और तूफान अधिक आम हो गए हैं। इन परिवर्तनों के कारण, मानव जीवन और आजीविका खतरे में पड़ गई है। पिछले कुछ दशकों में, जीवाश्म ईंधनों का अत्यधिक उपयोग, वनों का विनाश, और औद्योगिक प्रदूषण ने वातावरण में ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा में वृद्धि की है, जिसके परिणामस्वरूप ग्लोबल वार्मिंग हुई है। बढ़ती जनसंख्या के कारण शहरीकरण और औद्योगीकरण तेजी से बढ़ रहा है। इसने खनिजों और वनों का अत्यधिक दोहन किया है, जिससे पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ गया है। इस असंतुलित परिस्थितिकीय तंत्र के दुष्परिणामों की चर्चा करते हुए अंतर्राष्ट्रीय संस्था **'विश्व मौसम विज्ञान संगठन'** द्वारा जारी रिपोर्ट **"द स्टेट ऑफ द ग्लोबल क्लाइमेट"** बताती है कि जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप पारिस्थिकीय तंत्र और दुनिया भर की आबादी के समक्ष स्वास्थ्य और रहन-सहन का विकट संकट आ खड़ा हुआ है। यह रिपोर्ट यह भी बताती है कि हाल के वर्षों में तापमान बढ़ोतरी के कई रिकॉर्ड टूटे हैं। मसलन, पुराने सारे रिकॉर्ड तोड़ते हुए वर्ष 2019 सबसे गर्म वर्ष और 2010-2019 के दशक को सबसे गर्म दशक के रूप में रिकॉर्ड किया गया है। यहाँ यह भी ध्यान रखना जरूरी है कि पारिस्थितिकीय परिवर्तन केवल प्राकृतिक क्षति ही नहीं करता बल्कि मानव जीवन को भी बदतर स्थिति में ले आता है। मसलन, 2018 के आंकड़ों के अनुसार, दुनिया भर में लगभग 82 करोड़ लोग गंभीर खाद्य असुरक्षा का सामना कर रहे थे। दुनिया भर में विस्थापन का सबसे

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876

Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11 , Iss 12, 2022

बड़ा कारण प्राकृतिक आपदाएं हैं, विशेषकर तूफान और बाढ़। लगभग 67 लाख लोग प्राकृतिक आपदाओं के कारण विस्थापन के शिकार हुए। ये भयावह आंकड़े स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं कि पारिस्थितिकी तंत्र का बिगड़ना सिर्फ पर्यावरण ही नहीं, बल्कि मानव जीवन को भी गंभीर रूप से प्रभावित कर रहा है। क्या ये आंकड़े हमें इस बात पर गंभीरता से सोचने पर मजबूर नहीं करते कि जलवायु परिवर्तन के बढ़ते खतरे को देखते हुए हमें अपनी विकास नीतियों, प्रौद्योगिकियों और समाजिक भागीदारी को बदलने की आवश्यकता है?

कोरोना महामारी ने न केवल मानवता को गहरे संकट में डाला, बल्कि प्रकृति और पर्यावरण संरक्षण की अहमियत को भी उजागर किया। इस महामारी के दौरान प्रदूषण के स्तर में कमी आई और वन्यजीवों की गतिविधियां बढ़ीं, जिससे हमें यह सबक मिला कि आधुनिकता और विकास की अंधी दौड़ को रोककर, प्रकृति के साथ संतुलन बनाए रखना कितना जरूरी है। हमें इस महामारी से मिली सीख को अपने जीवन में उतारते हुए, एक ऐसे भविष्य की ओर बढ़ना चाहिए जहां मनुष्य और प्रकृति एक साथ सहअस्तित्व में रह सकें। हमें कथित विकास की अंधी दौड़ से बचकर पर्यावरण को बचाने और उसे स्वच्छ रखने के प्रयास करने चाहिए। कोरोना काल ने हमें इस कड़वी सच्चाई से रूबरू कराया है कि मनुष्य ने प्रकृति के साथ अपने संबंधों को पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया है। अति-उपभोगवाद और विकास के नाम पर हमने प्रकृति का अंधाधुंध दोहन किया है। क्या यह सच है कि विकास का मतलब प्रकृति का विनाश है? क्या मनुष्य की नियति प्रकृति को नष्ट करना ही है? यह एक गंभीर प्रश्न है जिस पर हमें गहराई से विचार करने की आवश्यकता है। हमारी आधुनिक जीवनशैली और विकास की धारणा प्रकृति के विपरीत हैं। हमने प्रकृति को एक निर्जीव वस्तु समझ लिया है, जिसका हम अपने स्वार्थ के लिए उपयोग कर सकते हैं। लेकिन क्या हमने कभी सोचा है कि हम प्रकृति के बिना जीवित नहीं रह सकते? भारतीय चिंतन परंपरा सदैव से प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण संबंधों पर जोर देती रही है। आज हमें अपनी इस परंपरा को याद करने और उससे प्रेरणा लेने की आवश्यकता है।

भारतीय चिंतन परंपरा में पर्यावरणीय सरोकार

भारतीय ग्रंथों का लेखन वेदों से प्रारंभ हुआ, जिनमें सबसे प्राचीन ऋग्वेद लगभग 1500 ईसा पूर्व का है। इसके बाद क्रमशः सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद रचे गए। ये ग्रंथ न केवल धार्मिक ज्ञान बल्कि प्रकृति के प्रति गहन समझ और सम्मान को भी दर्शाते हैं। इसके बाद, ब्राह्मण, आरण्यक, धर्मशास्त्र, धर्मसूत्र, उपनिषद, पुराण और महाकाव्य रामायण और महाभारत जैसे ग्रंथ सामने आए। इन सभी ग्रंथों में प्रकृति को देवत्व का दर्जा दिया गया है और उससे

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876

Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11 , Iss 12, 2022

जुड़े अनेक पौराणिक कथाएं हैं। बौद्ध और जैन धर्मों के ग्रंथों में भी प्रकृति के संरक्षण और संतुलन पर जोर दिया गया है। चरकसंहिता और सुश्रुतसंहिता जैसे आयुर्वेदिक ग्रंथों में भी औषधीय पौधों और प्राकृतिक उपचारों का विस्तृत वर्णन मिलता है। अर्थशास्त्र में भी प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन पर चर्चा की गई है। कवि कालिदास, भारत के महानतम कवियों में से एक, ने अपने काव्य में प्रकृति का इतना सुंदर वर्णन किया है कि पाठक स्वयं को उसके वर्णित दृश्यों में खो जाते हैं। मेघदूतम्, अभिज्ञानशाकुंतलम और रघुवंशम जैसे उनके काव्य में विभिन्न वनस्पतियों और जीवों की कथा में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

यजुर्वेद में एक श्लोक वर्णित है जो सृष्टि में पदार्थों के संतुलन को बनाए रखने का आह्वान करता है। "ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवा शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।" इस श्लोक का मुख्य संदेश है कि मानव को प्राकृतिक तत्वों के साथ सामंजस्यपूर्ण संबंध बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए। यह संतुलन न केवल बाह्य प्राकृतिक संसाधनों में, बल्कि मानव के आंतरिक और बाहरी जीवन में भी आवश्यक है। आधुनिक पर्यावरणीय संकटों के परिप्रेक्ष्य में, यह श्लोक हमें प्रकृति का संरक्षण करने और उसके साथ संतुलन स्थापित करने का महत्व बताता है। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, संतुलित उपयोग और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए यह दृष्टिकोण अत्यंत प्रासंगिक है। यह शांति मंत्र एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करता है जिसमें आकाश, वायु, पृथ्वी, जल, औषधियाँ, वनस्पतियाँ, देवता और ब्रह्मांड की संपूर्णता शामिल है। यह विभिन्न तत्वों के बीच संतुलन बनाए रखने का आह्वान करता है और प्रकृति के सभी हिस्सों में शांति की आवश्यकता पर जोर देता है। वर्तमान समय में, जहां पर्यावरणीय असंतुलन और संकट प्रबल हैं, यह मंत्र हमें प्रकृति के साथ सामंजस्य और शांति स्थापित करने की प्रेरणा देता है।

वर्तमान में प्रचलित नव-उदारवादी आर्थिक मॉडल, जो मूलतः पश्चिमी चिंतन पर आधारित है, प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन और अधिकतम उपभोग को प्रोत्साहित करता है। यह मॉडल मनुष्य और प्रकृति के बीच एक द्वंद्व पैदा करता है, जिसमें मनुष्य को प्रकृति का स्वामी माना जाता है। पश्चिमी चिंतन व्यक्तिवाद और भौतिकवाद पर केंद्रित है, और यह प्रकृति को जीतने को ही सभ्यता का प्रमाण मानता है। इसके विपरीत, भारतीय चिंतन मनुष्य और प्रकृति के बीच एक सह-अस्तित्व का विचार प्रस्तुत करता है, जिसमें प्रकृति को पूजनीय माना जाता है। औद्योगिक क्रांति के बाद पश्चिमी देशों में प्रकृति के दोहन का रुझान तेजी से बढ़ा, जबकि भारतीय दर्शन में सदैव प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास रहा है। आज, जब दुनिया जलवायु परिवर्तन जैसी गंभीर चुनौतियों का सामना

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876

Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11 , Iss 12, 2022

कर रही है, तब भारतीय चिंतन के पर्यावरण संरक्षण संबंधी सिद्धांत और अधिक प्रासंगिक हो गए हैं। चिंतक पंडित दीनदयाल उपाध्याय का मानना था कि पश्चिमी अर्थव्यवस्था उपभोगवाद को बढ़ावा देकर असीमित उत्पादन पर बल देती है, जो पर्यावरण और समाज दोनों के लिए हानिकारक है। उन्होंने इस तरह के विकास को न केवल विनाशकारी बल्कि प्राकृतिक संसाधनों की बर्बादी वाला बताया। उपाध्याय जी ने चेतावनी दी थी कि हमें प्रकृति के महत्व को समझते हुए संसाधनों का मितव्ययी उपयोग करना चाहिए और व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक संतुलित विकास मॉडल अपनाना चाहिए।

आज जब प्रकृति लगातार क्षतिग्रस्त हो रही है, तब हमें एक विशेष दिन निर्धारित करके प्रकृति के प्रति आभार व्यक्त करने की आवश्यकता महसूस होती है। भारतीय परंपरा में प्रकृति को हमेशा पूज्यनीय माना गया है। हमारे पूर्वजों ने प्रकृति के साथ एकात्मता का अनुभव किया था और उनके जीवन का हर पहलू प्रकृति से जुड़ा हुआ था। जन्म संस्कार में तुलसी के पत्ते का प्रयोग, विवाह संस्कार में मंडप की सजावट में फूलों का उपयोग, और श्राद्ध में पिंडदान जैसे विभिन्न संस्कारों में प्रकृति का महत्वपूर्ण स्थान है। होली, दीपावली, और व्रत जैसे त्यौहारों के माध्यम से लगातार मनुष्य के चेतन में प्रकृति के महत्व और स्थान को जीवित किया जाता है। ऋग्वेद, उपनिषद, और भगवद गीता जैसे पौराणिक ग्रंथों में प्रकृति के महत्व के संबंध में अनेक ऋचाएं मिलती हैं। हमारी लोककथाओं और कहानियों में प्रकृति के रक्षण के महत्व को बताने के साथ-साथ प्राकृतिक तत्वों से बेवजह छेड़छाड़ करने से उत्पन्न होने वाले दुष्परिणामों का भी वर्णन किया गया है।

वैदिक साहित्य हमें सिखाता है कि हमारा पर्यावरण एक परस्पर-संबद्ध प्रणाली है जिसमें प्रत्येक तत्व एक-दूसरे से जुड़ा हुआ है। शांति मंत्र में विभिन्न प्राकृतिक तत्वों (आकाश, पृथ्वी, जल, वनस्पति आदि) की शांति की कामना की जाती है। जब हम इन तत्वों की शांति की कामना करते हैं, तो हम स्वयं को भी शांत महसूस करते हैं। वैदिक दर्शन के अनुसार, आत्मा और प्रकृति एक ही स्रोत से उत्पन्न हुए हैं। प्रकृति के तत्वों के प्रति संवेदनशीलता और उनका सम्मान करने से हम अपने आंतरिक और बाह्य संसार में सामंजस्य स्थापित कर सकते हैं। हम प्रकृति के साथ समय बिताकर, उसे नुकसान पहुंचाने से बचकर, और उसके संसाधनों का संयमित उपयोग करके प्रकृति के प्रति अपना सम्मान दिखा सकते हैं। यह न केवल हमारे पर्यावरणीय संकटों का समाधान है, बल्कि दीर्घकालिक मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए भी आवश्यक है। प्रकृति के साथ हमारा जुड़ाव हमें शांति, खुशी और संतुष्टि प्रदान करता है।

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876

Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11 , Iss 12, 2022

भारतीय चिंतन परंपरा हमेशा से ही इस बात पर ज़ोर देती रही है कि अगर आर्थिक विकास और संवहनीयता के बीच सह-अस्तित्व की भावना बनाए रखनी है तो उपभोग और जीवन-शैली को इस तरह का बनाना पड़ेगा जिससे प्रकृति पर नकारात्मक असर न पड़े। पौराणिक ग्रंथों में इसकी महत्ता को बताते हुये कहा गया है कि '**माता भूमि: पुत्रोहं पृथिव्या**' अर्थात पृथ्वी को मां के समतुल्य माना गया है। वहीं अर्थवेद में भी कहा गया है कि '**विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिस्था हिरयनवशा जगतों निवेशनी**' अर्थात पृथ्वी हम सबकी आश्रयदाता है। पृथ्वी की रक्षा करना हम सब का परम कर्तव्य है। पृथ्वी पर मौजूद प्राकृतिक संसाधन उपहार स्वरूप हम सभी को प्राप्त हैं। मानवजीवन को सहज और सुखमय बनाने हेतु प्रकृति ने जल, नदियां, पहाड़, हरे-भरे वन और धरती के नीचे छिपी हुई खनिज संसाधन धरोहर के रूप में प्रदान किए हैं। इसलिए सभी मनुष्य का यह दायित्व है कि प्रकृति की रक्षा करे तभी संरक्षित प्रकृति ही मानवजाति का संरक्षण और संवर्धन करेगी। इसकी पुष्टि करते हुए कहा गया है कि '**धर्मो रक्षति रक्षित:**' अर्थात रक्षित किया हुआ धर्म ही हमारी रक्षा करता है। यजुर्वेद के ही दसवें अध्याय में मातृभूमि की वंदना करते हुए कहा गया है- **'पृथ्वी मातर्मा हिंसीर्मा अहं त्वाम्'**। अर्थात हे मातृभूमि! न तू हमारी हिंसा कर और न हम तेरी हिंसा करें। स्पष्ट ही यहां मातृभूमि की हिंसा से तात्पर्य उसका अनावश्यक और अत्यधिक दोहन से है।

निजी स्वार्थ, भोग, विलासिता और उपभोगवाद के चकाचौंध में संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया गया है। नतीजतन, पारिस्थितिकीय तंत्र पर निर्भर समुदायों की समृद्धि गंभीर रूप से प्रभावित हुई है। इसके साथ ही, समावेशी और पारिस्थितिकीय संवहनीयता के विकल्पों में भी गिरावट आई है। हमने भावी पीढ़ी के लिए जल संकट, प्रदूषण और जैव विविधता के क्षरण जैसी गंभीर समस्याएं पैदा कर दी हैं। मौजूदा परिस्थिति को देखते हुए आज धारणीय विकास पर अमल करने की बात की जाने लगी है। धारणीय विकास का अर्थ है वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति इस प्रकार करना कि भावी पीढ़ी को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किसी प्रकार का समझौता न करना पड़े। यह अवधारणा पश्चिम में हाल ही में उभरी है, लेकिन यह हमारे सदियों पुराने भारतीय दर्शन में वृक्ष पूजन, जल संरक्षण और प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग जैसे सिद्धांतों में पहले से ही मौजूद है। उपनिषद में कहा गया है कि '**तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृध: कस्यस्विद्धनम्**' अर्थात प्रत्येक मनुष्य सिर्फ अपनी आवश्यकता के अनुरूप ग्रहण करे जो उसके भाग के रूप में नियत कर दी गयी हैं, अन्यथा अनावश्यक संग्रह न करे। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने अपनी पुस्तक 'हिंद स्वराज' में स्पष्ट किया था कि पृथ्वी सभी मनुष्यों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त संसाधन प्रदान करती है, लेकिन किसी व्यक्ति के लालच को संतुष्ट करने के लिए नहीं। धारणीय

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876

Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11 , Iss 12, 2022

विकास के संदर्भ में, गांधी जी का यह विचार आज भी अत्यंत प्रासंगिक है। वर्तमान पारिस्थितिक संकट से निपटने के लिए हमें इन विचारों को अपने जीवन में आत्मसात करना होगा।

निष्कर्ष

भारतीय वैदिक ज्ञान और परंपराएं हमें पर्यावरणीय चेतना, सामाजिक और नैतिक जिम्मेदारियों का महत्व समझाने के साथ-साथ, सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में एक मूल्यवान दृष्टिकोण प्रदान करती हैं। हमें इन शिक्षाओं को समझकर और अपने जीवन में अपनाकर पर्यावरणीय स्थिरता और सामाजिक समृद्धि की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए। भारतीय परंपराओं और ज्ञान का संदेश संपूर्ण विश्व को दिया जा सकता है, जिससे वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान संभव हो सके। **'सर्व लोक हितम'** का सिद्धांत हमें यह सिखाता है कि पर्यावरणीय संरक्षण में प्रत्येक व्यक्ति की भूमिका महत्वपूर्ण है और हमें सामूहिक प्रयासों के माध्यम से इसे प्राप्त करना चाहिए। भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित पर्यावरणीय मूल्यों को आधुनिक जीवन में अपनाकर हम एक स्थायी भविष्य का निर्माण कर सकते हैं। वेदों, उपनिषदों और अन्य ग्रंथों में प्रकृति के प्रति गहरा सम्मान व्यक्त किया गया है। इन मूल्यों को नीति निर्माण और जनजीवन में शामिल करके हम न केवल भारत बल्कि विश्व को एक स्वच्छ और समृद्ध भविष्य प्रदान कर सकते हैं। अतीत की गलतियों से सीखते हुए, हमें अब अपनी जीवनशैली और विकास के तरीकों में बदलाव लाना होगा। अत्यधिक उपभोगवादी सोच को त्यागकर, विकास और प्रकृति के बीच संतुलन स्थापित करना होगा। हमें प्रकृति के साथ सद्भाव में रहना सीखना होगा। व्यक्तिगत स्तर पर, हमें पर्यावरण के प्रति जागरूक बनकर छोटे-छोटे बदलाव करने होंगे। साथ ही, सरकार और उद्योग जगत को भी पर्यावरण संरक्षण के लिए ठोस कदम उठाने होंगे। इन सभी प्रयासों से हम न केवल पर्यावरणीय संकट से उबर सकते हैं, बल्कि एक बेहतर भविष्य का निर्माण भी कर सकते हैं।

संदर्भ

1) द्विवेदी, ओ. पी., और तिवारी, बी. एन. (1987). *इनवायरन्मेंटल क्राइसिस एंड हिंदू रिलिजन*. गीतांजलि प्रकाशन हाउस, नई दिल्ली.
2) द्विवेदी, ओ. पी. (1993). *ह्यूमन रेस्पोंसिबिलिटीज एंड द इनवायरन्मेंट: ए हिंदू पर्सपेक्टिव*. जर्नल ऑफ हिंदू क्रिश्चियन स्टडीज, 6(8).
3) कृष्ण, एन. (2017). हिंदुइज्म एंड नेचर. पेंगुइन रैंडम हाउस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड.
4) यजुर्वेद. अध्याय: 36/मन्त्र: 17.

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876

Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11 , Iss 12, 2022

5) सुंदरम, के. वी., और मोनी, एम. (सं.) (2003). *सस्टेनेबल डेवलपमेंट एंड सस्टेनेबल लाइफ स्टाइल्स: प्रोसिडिंग्स ऑफ़ द अर्थ डे सेलिब्रेशन एंड द इंटरनेशनल कांफ्रेंस ऑन सस्टेनेबल डेवलपमेंट एंड सस्टेनेबल लाइफ स्टाइल्स, 21-23 अप्रैल, 2001*. नॉर्दर्न बुक सेंटर.

6) गांधी, एम. के. (2014). *हिंद स्वराज: भारतीय स्वशासन*. सर्व सेवा संघ प्रकाशन.

7) उपाध्याय, दीनदयाल. (2021). द टू प्लान्स: दीनदयाल उपाध्याय का भारत के विकास के लिए दृष्टिकोण. प्रभात प्रकाशन, दिल्ली.

8) वर्ल्ड मेटेरोलॉजिकल ऑर्गनाइजेशन. (2022). स्टेट ऑफ द ग्लोबल क्लाइमेट 2021. वर्ल्ड मेटेरोलॉजिकल ऑर्गनाइजेशन (ब्लूएमओ) रिपोर्ट डब्लूएमओ-न. 1290, जिनेवा.

9) शर्मा, रिमझिम. (2021). इनवायरनमेंट इन पॉपुलर कल्चर एंड एन्सिएंट इंडियन लिटरेचर. समरहिल: आईआईएएस रिव्यू, 27(1), 25–30.